ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

गुप्तकालीन समाज में नारियों की स्थिति

DR. ABHA RANI
M. A. Ph.D (History)

संक्षिप्त रूप –

प्राचीन काल की अपेक्षा पूर्व–मध्यकाल में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में गिरावट आई। इस काल का साहित्यिक सूत्रों से ज्ञात होता है कि पुत्री की स्थिति परिवार में पुत्र की अपेक्षा बहुत गिर गई थी। कथासरित्सागर में भी लिखा है कि पुत्र सुख का प्रतीक है और पुत्री दुख की मूल है। मौर्य युग के बाद स्त्री शिक्षा की परम्परा एवं अवस्था क्षीण होने लगी थी और पूर्व–मध्ययुग में तो यह बहुत ही मंद पड़ गई थी। इस युग में तुर्क अफगानों के आक्रमण भारत पर प्रारम्भ हो गए थे, जिनके कारण बाल–विवाह की प्रवृत्ति और अधिक बढ़ गई थी। यह सच है कि उच्च कुलों की कन्याएँ इसके बाद के काल में भी वेद– ाास्त्रों तथा अन्य विद्याओं की शिक्षा प्राप्त करती रही। पर वे अपवाद स्वरूप ही थी। इस काल में कन्याओं की उच्च शिक्षा समाज के उच्च वर्गों तक ही सीमित थी। उन्हें साहित्य के अतिरिक्त संगीत, नृत्य और चित्रकला की ि ाक्षा दी जाती थी। मंडन मिश्र की पत्नी पांडित्य के लिए प्रसिद्ध थी। संस्कृत सुभाशितावलियो से हमें ज्ञात होता है कि – इस काल की कुछ स्त्रियाँ अपनी मनोहर काव्य भौली के लिए प्रसिद्ध थी। जैसे कि भीलभट्टारिका और गुजरात की देवी नाम की कवयित्री राजशेखर ने विजयाका की तुलना सरस्वती से की है।

यद्यपि भारतीय इतिहास में प्राचीन काल में स्त्रियाँ भी पुरुशों के ही समान शिक्षा और सम्मान प्राप्त किया करती थी, पर कालांतर में इस स्थिति में परिवर्तन हुआ और भूद्रों के समान स्त्रियों के लिए भी यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया जाने लगा कि उनका उपनयन संस्कार नहीं होना चाहिए उनका कार्य क्षेत्र केवल अपने परिवारों तक ही सीमित है। ''स्त्रीशूद्रौ नाधीयाताम्'' अर्थात् स्त्रियों और शूद्रों को विद्याभ्यास नहीं कराना चाहिए। यह विचार धीरे–धीरे बद्धमूल होते गया। बाल विवाह के कारण स्त्रियों के लिए शिक्षा प्राप्त कर सकना संभव नहीं रहा, और वे अपनी सुरक्षा तथा निर्वाह के लिए पुरुशों पर निर्भर रहने लगी। मनु ने कहा है कि कुमारी अवस्था में पिता स्त्री की रक्षा करता है, यौवन में पति और वृद्धावस्था में पुत्र। (पिता रक्षति कौमार्य, भर्ता रक्षति यौवने...) (स्त्री कभी स्वतंत्र होकर नहीं रह सकती। यवन, भांक, हूण आदि विदे ाी जातियों के आक्रमण काल में स्त्रियों की रक्षा भारत के लिए एक गंभीर समस्या बन गई थी। इसी कारण यह आवश्यक समझा जाने लगा कि पिता, पति तथा पुत्रों द्वारा स्त्रियेां पर नियंत्रण रखना चाहिए। पतियों को अपनी पत्नियों का वस्त्र, आभूशण देकर प्रसन्न रखना चाहिए। किन्तु गृह कार्य में इतना व्यस्त रखना चाहिए कि वे अन्य पुरुशों के विशय में सोच भी न सकें। इस काल में भी अभिजात वर्ग के लोग कई पत्नियाँ रखते थे।

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

पूर्व मध्यकाल में नारियों के बीच पर्दा प्रथा का अभाव था। वस्तुतः पर्दा प्रथा का प्रचलन भारत में मुसलमानों के राजनीतिक प्रभाव की स्थापना के बाद हुआ। अथवा मुसलमान स्त्रियों के बीच प्रचलित पर्दा प्रथा की नकल भारतवासियों ने की। अभिजात वर्ग में पर्दा का प्रचलन दिखाई पड़ती है। साधारण वर्ग की स्त्रियाँ तो निश्चित रूप से पर्दा नहीं करती थी। क्योंकि उन्हें जीविका के लिए खेतों में काम करना पड़ता था। अभिजात वर्ग तथा राजपरिवार में इसका प्रचलन था। अभिजात वर्ग तथा राजपरिवार में इसका प्रचलन था। बारहवीं सदी के बाद मुस्लिम आक्रमणकारियों की लोलुप दृश्टि से बचाने के लिए स्त्रियों ने पर्दा करना प्रारम्भ किया और बाद में यह हिन्दू समाज का अंग बन गया। यद्यपि धनी परिवारों में पर्दे की प्रथा इस समय में विद्यमान थी। किन्तु अबूजैद के अनुसार भारतीय राजाओं की राजसभाओं में स्त्रियाँ विदेशी मनुश्यों की उपस्थिति में बिना पर्दे के उपस्थिति होती थी। इससे स्पश्ट है पर्दे की प्रथा देश के सभी भागों में न थी, और जनसाधारण में तो इसका प्रचलन मुसलमानों के आने के बाद ही हुआ। इसका कहना यह था कि हिन्दू स्त्रियाँ अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए पर्दा करने लगी। और हिन्दू राजा भााही घरानों की देखा–देखी अपनी पत्नियों से पर्दा करवाने लगे। कालिदास के प्रसिद्ध नाटक अभिज्ञान शाकुन्तलम के अनुसार जब शकुन्तला राजा दुश्यन्त की राजसभा में गई तो उसने अपने मुख को पर्दे से ढक लिया था। यद्यपि वह अवगुण्ठन (पर्दा) उसके भारीर के लावण्य को छिपा सकने में असमर्थ था। हर्शचरितम् (सातवीं सदी ईस्वी सन्) में राज्यश्री को नर्तकियाँ दिन–रात देवता के समक्ष नृत्य, संगीत प्रस्तुत करने के लिए नियुक्त थी। अलबरूनी से ज्ञात होता है कि इस प्रथा का विरोध प्रारंभ में ब्राह्मणों ने किया। परन्तु राजाओं और अभिजात वर्ग ने इसका समर्थन किया।

शब्द–कुंजी :–

- स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में गिरावट।
- स्त्री शिक्षा की परम्परा का हीण होना।
- कन्याओं में उच्च शिक्षा का अभाव।
- साहित्य, संगीत, नृत्य और चित्रकला की विद्या का प्रचलन।
- गुप्तकालीन समाज में नारियों की स्थिति।
- स्त्रीयों के विवाह की अवस्था का घटना।
- घुंघट अथवा पर्दे का प्रयोग।
- गुप्तकाल में कलाकृतियों में नारी प्रतिभाओं पर होना।

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

अध्ययन का उद्देश्य

- गुप्तकालीन समाज में नारियों की स्थिति गिरी हुई का विवेचन करना है।
- गुप्तकालीन स्मृति ग्रन्थ स्त्रियों को वैदिक शिक्षा प्रदान का अध्ययन करना है।
- गुप्तकालीन समाज में विधवा–विवाह में प्रचलन किस की सीमा, का अवलोकन करना है।
- विदेशी जातियों के आक्रमणकाल में स्त्रियों की रक्षा एक गम्भीर समस्या का मूल्यांकण करना है।
- पुनः विवाह संयमपूर्ण जीवन, आभूशण और अन्य विलास–साम्रागियों का प्रयोग वर्णनीय के कारण उल्लेख करना है।

गुप्तकालीन समाज में नारियों की स्थिति पिछले युगों की अपेक्षा कुछ गिरी हुई प्रतीत होती है। स्त्रियों के विवाह की अवस्था घटा दिये जाने से उनके लिए सामान्यतया उच्च शिक्षा का द्वार अवरुद्ध हो गया था और विवाह के सम्बन्ध में उनको किसी प्रकार पतिवरण की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं थी। कुछ स्मृति–ग्रंथों पिताओं के लिए यह अनिवार्य ठहराया गया है कि वे अपनी कन्याओं का विवाह उनके यौवन के पूर्व ही कर दें। नारद और ज्ञावल्क्य ने तो यहाँ तक लिख दिया कि जो पिता अपनी कन्या का विवाह उसके राजस्वला होने के पूर्व नहीं करता है, उसे नरक जाना पड़ेगा। गुप्तकालीन स्मृति ग्रन्थ स्त्रियों को वैदिक शिक्षा देने की अनुमति नहीं प्रदान करते। फिर भी, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च कुलों में नारियों को शिक्षा देने की अनुमति नहीं प्रदान करते। फिर भी, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च कुलों में नारियों को ि ाक्षा दी जाती थी। वैदिक शिक्षा भले ही उनको न प्राप्त होती रही हो, किन्तु वे निरक्षर अथवा अि ाक्षित नहीं होती थीं। आश्रमवासिनी कन्याएँ इतिहास और पुराण का अध्ययन करती थीं। वे न केवल काव्यों को ही समझ सकती थीं, अपितु स्वयं भी पद्य रचना कर लेती थीं। 'अभिज्ञान शकुन्तलम्' में अनुसूया शकुन्तला के छन्दोबद्ध प्रणय–सन्देश को समझ लेती है। ललित कलाओं में स्त्रियों की निपुणता के उल्लेख गुप्तकालीन साहित्य ग्रन्थों में प्रचुरता से प्राप्त होते हैं। महाकवि कालिदास ने आद र्ा पत्नी के अन्य गुणों के साथ उसकी ललित कला–निपुणता का भी उल्लेख किया है। शकुन्तला की सखी अनुसूया चित्रकला में और यज्ञ की पत्नी वीणावादन में कुशल थीं। 'अमरकोश' जो गुप्तकाल की रचना है, में नारी शिक्षिकाओं (उपाध्याय और उपाध्यायी) तथा वैदिक मन्त्रों की शिक्षा देने वाली नारियों का उल्लेख किया गया है। परन्तु यह सम्भव है कि 'अमरकोश' का यह उल्लेख केवल कात्यायन तथा अन्य पूर्व वैयाकरणों का अनुकरण मात्र हो।

गुप्तकालीन समाज में विधवा–विवाह का प्रचलन किस सीमा तक था, यह कह सकना कुछ कठिन अवश्य है। 'अमरकोश' से पता चलता है कि एक द्विजन्मा पुरुश पुनर्भू (विवाहित

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

विधवा) को अपनी प्रमुख पत्नी भी बन सकता था। चन्द्रगुप्त–द्वितीय ने अपने अग्रज की विधवा पत्नी से विवाह किया था। नारद और पारा ार ने विधवाओं ने पुनर्विवाह को नियमानुकूल बतलाया है, किन्तु अन्य स्मृतिकारों ने विधवाओं के लिए ब्रह्मचर्य और आत्म–संयम के जीवन को आव यक कहा है। वृहस्पति ने तो यहाँ तक कहा है कि विधवा स्त्री को अपने पति के साथ उसकी चिता पर जल जाना चाहिए। सती–प्रथा का प्रचलन सम्भवतः समाज में था। कालिदास के नाटकों और 'मृच्छकटिक' में सती–प्रथा का उल्लेख मिलता है। इस सम्बन्ध में एक ऐतिहासिक घटना का भी जिक्र मिलता है। जब हूणों के आक्रमण का सामना करते हुए सन् 510 ई0 के लगभग गोपराज ने रणभूमि में वीरगति पाई तो उसकी पत्नी उसकी चिता पर जल कर मर गई। आगे के युग में बाण ने भी हर्श की माता को उसके पिता की मृत्यु– शय्या पर पड़े रहने के कारण सती होने के लिए उद्यत बतलाया है, परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि गुप्त और हर्शकालीन भारत में सती–प्रथा का पर्याप्त प्रचार नहीं होने पाया था। वृहस्पति को छोड़कर अन्य किसी भी समकालीन स्मतिकार ने सती–प्रथा का उल्लेख नहीं किया है। जो विधवाएँ पुनर्विवाह नहीं करती थीं, वे अत्यन्त सादा और संयमपूर्ण जीवन व्यतीत करती थीं। वे आभूशण और अन्य विलास–सामग्रियों के प्रयोग अपने लिए वर्जनीय समझती थीं।

ऐसा प्रतीत होता है कि पर्दे की प्रथा गुप्तकालीन समाज में कुछ सीमा तक अवश्य विद्यमान थी। यद्यपि गुप्त–काल की कलाकृतियों में नारी–प्रतिमाओं के ऊपर किसी प्रकार का आवरण नहीं है तथापि अभिजात कुलों की स्त्रियाँ घरों से निकलने पर घूँघट अथवा पर्दे का प्रयोग करती थीं। परन्तु इस युग में पर्दे की प्रथा वि ोश कठोर नहीं थी।

गुप्तकाल के साहित्यिक ग्रंथों और कलाकृतियों से इस समय के वस्त्राभूशण पर प्रचुर प्रका ा पड़ता है। पुरुशों का वस्त्र साधारणतया एक अधोवस्त्र (धोती) तथा उत्तरीय होता था। बिना सिले हुए वस्त्र पहनने का रिवाज ही अधिक था। यद्यपि विदेशी सीथियनों ने कुल सिले हुए कपड़ों, जैसे कोट तथा पायजामा का प्रचलन दे ा में किया, तथापि गुप्त सम्राटों ने अधिकतर धोती और उत्तरीय को ही अपनाया। धोती और उत्तरीय ही सम्भवतः देश की राश्ट्रीय वेशभूशा थी। पुरुशों के द्वारा सिर पर उश्णीय (पगड़ी) पहने जाने की सूचना भी मिलती है।

स्त्रियों की पोशाक गुप्त–काल में भी बहुत कुछ आज जैसी थी। बाघ की गुफाओं में अनेक स्त्रियों के चित्र बने हैं जिनमें स्त्रियों को साड़ी और चोली पहने हुए दिखाया गया है। अजन्ता के चित्र में एक स्त्री छीट की अँगिया पहने हुए चित्रित की गई है। स्त्रियाँ की साड़ियाँ बहुधा रंगीन हुआ करती थीं।

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

सूती कपड़े का प्रचलन अधिक था किन्तु ऋतु के अनुसार ऊनी और रेशमी कपड़े पहनना भी गुप्त–काल के भारतवासी जानते थे। फाह्यान ने विवरण से ऐसा मालूम पड़ता है कि भारतवासी ऊनी और रेशमी कपड़े का प्रयोग बहुतयात से किया करते थे। रेशमी कपड़ा सम्भवतः इस समय भी चीन से आता था जिसका उल्लेख महाकवि कालिदास ने 'चीनां ुक' भाब्द के द्वारा किया है। रेशमी वस्त्र की स्त्रियों में लोकप्रियता का उल्लेख कुमारगुप्त–प्रथम के मन्दसोर अभिलेख में भी किया गया है। अभिलेख में एक स्थान पर उपमा के रूप में कहा गया है कि जैसे एक युवती स्त्री सुवर्ण हार धारण किये हुए, पान और पुश्पों से युक्त भी अपने प्रेमी से एकान्त में मिलने नहीं जाती, जब तक कि वह रेशमी वस्त्र न पहन ले, उसी प्रकार पृथ्वी का वह भाग (नगर) उन लोगों से विभूशित था मानो वे रेशमी वस्त्र धारण किये गये हैं जो स्पर्श में तथा विभिन्न रंग के कारण स्त्री–पुरुशों की अलंकारिप्रियता तथा विभिन्न प्रकार के आभूशणों का परिचय प्राप्त होता है। स्त्रियों के आभूशण विविध प्रकार के तथा नेत्रों को भले लगनेवाले होते थे। सोने तथा मोतियों के हारों का सौन्दर्य अद्भुत होता था। 'मृच्छकटिक' में चारुदत्त की स्त्री वसन्तसेना के लिए मोतियों के जो हार भेजती है, उसके वर्णन से पता चलता है कि इस समय के सुवर्णकार निपुण और कलात्मक अभिरूचि–सम्पन्न होते थे। कम से कम छः प्रकार की करधनियों (मेखला) का उल्लेख मिलता है। कड़ों, अँगूठियों और केयूरों (बाजूबन्दों) का प्रयोग बहुलता से किया जाता था। पैरों में काफी अधिक संख्या में कड़े पहने जाते थे। घुँघरूवाले आभूशणों को भी स्त्रियाँ पैरों में पहनती थीं। कालिदास ने सुन्दरियों के 'आशिंजित नूपुर' चरणों का उल्लेख किया है। पुरुशों को भी गहने पहनने का बड़ा भौक था। राजकुल के पुरुश विभिन्न प्रकार के आभूशण धारण करते थे। महाकवि कालिदास के 'रघुवंश' से विदित होता है कि इन्दुमती के स्वयंवर में जो नरेश और राजकुमार आये थे, वे 'उदारनेपथ्यभृत' अर्थात् बढ़िया वेशभूशा धारण किये हुए थे और केयूर (बिजायेठ) अंगुलीयक (अँगूठी) और हार पहने हुए थे। मेघदूत का यक्ष अपने हाथ में कनकवलय पहने था जो उसकी विरह–कुशलता के कारण ढीला पड़ गया था। साहित्य ग्रंथों से स्पश्ट पता चलता है कि केवल राजा तथा उनके सामन्त आदि ही नहीं, वरन् उनके अनुचर तथा सेवक भी आभूशण पहना करते थे। 'वृहत्संहिता' में कहा गया है कि केवल राजा–रानियों तथा राजसभा के परिचारक–परिचारकों को ही नहीं, वरन् धार्मिक अनुश्ठानों में संलग्न पुरुशों को भी गहने पहनने चाहिए। पहाड़पुर (राज ाही, बंगाल) में पुरुशों की कुछ मूर्तियाँ मिली हैं जिनके वक्षःस्थल पर यज्ञोपवीत के साथ कटि पर कटिबंध तथा उदर में उदरबंध आदि गहने दिखलाई पड़ते हैं। 'अमरकोश' ने ऐसे अनेक भाब्दों की एक लम्बी सूची मिलती है जिनसे विभिन्न प्रकार के आभूशणों का पता चलता है। सिर, ललाट, कानों, नाक, कलाइयों, भुजाओं, अँगुलियों, कमर तथा पैरों के गहनों का इस समय काफी प्रचार था। नाक की नथुनियों का प्रचलन इस समय सम्भवतः अज्ञात था। चन्द्रगुप्त–प्रथम तथा कुमारदेवी वाले सुवर्ण सिक्के पर, विवाह के उपलक्ष्य में, राजा कुमारदेवी को अँगूठी देते हुए अंकित किया गया है। स्त्रियों के केश सँवारने का भी प्रचुर प्रमाण प्राप्त होता है जिससे सिद्ध होता है

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

कि नारियों को अपने केश अलंकृत करने का बहुत अधिक भौक होता था। स्त्रियाँ पुश्पों से अपने बालों को विविध प्रकार से सजाया करती थीं। महाकवि कालिदास के 'मेघदूत' से विदित होता है कि केशों में मन्दार के फूल लगाकर स्त्रियाँ उनको सुगन्धित करने का प्रयास रही है।

निष्कर्श :

स्त्री के लिए दुनिया बदलती तो है लेकिन आज भी कुछ सामाजिक व्यवहार उसे बराबरी का दर्जा नहीं देते। कहने में सीधी सी बात होती है, लेकिन वास्तव में ये भी सामाजिक अन्याय का रूप है। सामाजिक न्याय एक आम स्त्री के लिए काफी आवश्यक और महत्वपूर्ण है।

संदर्भ स्रोत

i. 'तारुण्यकान्त्युपचितोपि सुवर्णहारताम्बूलपुश्पविधिना समलंकृतोपि नारीजनः प्रियमुपैति न तावदस्यां यावन्न पट्टमवस्त्रयुगानि धत्ते स्पर्शता वर्नान्तरविभागचित्रेण नेत्रसुभगेन यैस्सकलमिदं क्षितितलमलंकृतंपट्टवस्त्रेण।'
ii. History of the Guptas, p. 195
iii. Clactical Age, p. 193
iv. Vakantata Gupta Age, p. 33-56
v. Corporate Life in Ancient India, p. 68
vi. Dr. R. C. Mumdar classical Age, p. 167
vii. R. H. Dundakar, A History of Guptas p. 175-176
viii. स्टेनो राजशेखर कर्पुरमंजरी, (अ) कैम्ब्रिज, 1901
ix. नारायण राम आचार्य, याज्ञवल्क्य स्मृति, 1926, 13
x. स्मृतिचनिद्रका, संस्कार कांड, पृ0 216, 321
xi. वृहद्यम, 3, 21.—22
xii. के0पी0 पारब, भट्ट, हर्शचरितम, बम्बई, 1934, पृ0 212
xiii. वही, पृ0 122
xiv. कथांसरित्सागर, पूर्वोद्धत, 27, 818—2

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

xv. टी0 वाटर्स, ऑन युवानच्वाग्ंस टैवल्स इन इंडिया टी0 रीज0 डैविड्स तथा एस0 डब्लू0 बुशेल (सं.) लंदन 1904–5, पृ0–168

xvi. कथासरित्सागर, पूर्वोद्धत, 53, 108

xvii. शशि अवस्थी, कादम्बरी, पृ0 430–31

xviii. बाणभट्ट, हर्शचरितम, पूर्वोद्धत, 4, पृ0 13

xix. मेधातिथि, टीका मनुस्मृति, 91

xx. विज्ञानेश्वर टीका, याज्ञवल्क्य स्मृति, 1, 224, 275

xxi. मत्स्यपुराण, पूना, 1907, 227, 135–55

xxii. स्मृतिचंद्रिका, 568–70, 572–75

xxiii. वही, 575–76

xxiv. मत्स्यपुराण, पूना, 1907, 70, 78, 288, 144 आदि

xxv. इब्नखुर्दब्जा, पृ0 16

xxvi. देवचंदालाल भाई, सिद्धार्शि सूरी, उपमिति–भव–प्रपंच कथा, बम्बई, 1918–1920, पृ0 374, 385, 618 आदि

xxvii. आर0 एस0 पंडित, कल्हण, राजतरंगिणि, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, 1935, पृ0 31

xxviii. एपिग्राफिया इंडिका, कलकत्ता और दिल्ली, 22, 122 आदि।

xxix. शशि अवस्थी, प्राचीन भारतीय समाज, पृ0 468

xxx. ए0 एस0 अल्टेकर, पोजी ान ऑफ वीमेन इन हिन्दू सीबिलाइजे ान, बनारस, 1938, पृ0 183

xxxi. ए0 एस0 अल्टेकर, पोजी ान ऑफ वीमेन इन हिन्दू सीबिलाइजे ान, बनारस, 1938, पृ0 184

www.ijahms.com